जनसत्ता

19 जून, 2019

हड़ताल और सवाल

कोलकाता के एक अस्पताल में ग्यारह जून को डॉक्टरों के साथ मारपीट की घटना के बाद पश्चिम बंगाल और फिर देश भर में डॉक्टरों की हड़ताल से स्वास्थ्य सेवाएं जिस तरह से चरमराईं, उसकी कीमत सिर्फ मरीजों को चुकानी पड़ी है। न डॉक्टरों पर इसका कोई असर पड़ा है, न सरकारों के कान पर जूं रेंगी। फिलहाल राहत की बात तो यह है कि पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने हड़ताली डॉक्टरों की मांगें मान लीं हैं और बंगाल सहित देश भर में डॉक्टर काम पर लौट आए हैं। लेकिन इस हड़ताल से जो सवाल निकले हैं, उनका जवाब न तो सरकारों के पास है, न डॉक्टरों के पास। इन सात दिनों के दौरान इलाज के अभाव में जिन मरीजों की जान गई, या जिन्हें गंभीर पीड़ा के दौर से गुजरना पड़ा, उसका जिम्मेदार किसे माना जाए? डॉक्टरों को या फिर उस सरकारी तंत्र को जो चिकित्सा सेवाओं को सुचारु चला पाने और सात दिन में भी डॉक्टरों को काम पर लौटा पाने में नाकाम साबित हुआ? डॉक्टरों की हड़ताल को लेकर केंद्र और राज्य सरकारों का जो रवैया देखने को मिला है, वह उन्हें कठघरे में खड़ा करता है। वरना कितना भी गंभीर मामला क्यों न हो, सात दिन तक चिकित्सा सेवाओं का ठप रहना क्या नागरिकों के जीवन से खिलवाड़ नहीं है?

अस्पतालकर्मियों और मरीजों के परिजनों के बीच मारपीट की घटनाएं आम हैं। शायद ही ऐसा कोई दिन गुजरता हो जब इस तरह के पांच-दस मामले सामने नहीं आते हों। इस तरह की घटनाएं दिल्ली के एम्स से लेकर जिले-कस्बे के अस्पतालों तक में होती रहती हैं। मरीजों-डॉक्टरों के बीच विवाद अचानक ही पैदा होते हैं। हर मरीज को अपनी स्थिति सबसे ज्यादा गंभीर लगती है और ऐसे में वह डॉक्टर से अपेक्षा करता है कि उसे पहले देखा जाए। जब ऐसा नहीं होता तो विवाद खड़ा हो जाता है। कई बार डॉक्टरों और मरीजों का एक-दूसरे के प्रति व्यवहार आहत करने वाला होता है और झगड़ा खड़ा हो जाता है। मरीजों के प्रति डॉक्टरों की लापरवाही के किस्से भी किसी से छिपे नहीं हैं, कई बार तो डॉक्टरों की लापरवाही ही मरीज की जान ले लेती है। ऐसी घटनाएं तूल तब पकड़ती हैं जब अस्पताल प्रशासन इस तरह की समस्याओं का समाधान नहीं कर पाते। इसमें कोई दो राय नहीं कि ज्यादातर अस्पतालों में डॉक्टरों को मुश्किल हालात, सुविधाओं के अभाव और भारी दबाव में काम करना पड़ता है। ऐसे में जब मरीजों की न्यूनतम बेहतर इलाज की उम्मीदें भी पूरी नहीं हो पातीं तो लोगों का गुस्सा फूटता है और बड़े विवाद का रूप ले लेता है।

ड्यूटी के दौरान डॉक्टरों की सुरक्षा बड़ा और अहम मुद्दा है। लेकिन दुख की बात यह है कि डॉक्टरों की सुरक्षा के लिए अब तक कोई बड़ा कदम नहीं उठाया गया है। अब जाकर केंद्र सरकार की नींद टूटी है और स्वास्थ्य मंत्री ने डॉक्टरों की सुरक्षा के लिए कानून बनाने पर फिर से विचार करने की बात कही है। अभी भी सिर्फ विचार की बात कही जा रही है। लेकिन ऐसा सुनने को नहीं मिला कि जल्द ही कोई ठोस समाधान निकलेगा। दो साल पहले भी डॉक्टरों की सुरक्षा के लिए कानून बनाने का मुद्दा उठा था, लेकिन अब तक इस दिशा में कुछ नहीं हुआ, जबकि डॉक्टर-मरीजों के बीच विवाद की अनगिनत घटनाएं हो चुकी हैं। जाहिर है, ऐसे मामले सरकारों की प्राथमिकता में कहीं नहीं होते, बल्कि ऐसी घटनाओं की आड़ में राजनीतिक हित साधने की कोशिशें होने लगती हैं। इस तरह की घटनाओं को रफा-दफा करने की प्रवृत्ति ने ही कोई ऐसा तंत्र विकसित नहीं होने दिया जो डॉक्टरों के साथ-साथ मरीज की भी सुरक्षा सुनिचित करता हो।

व्यापार में तकरार

भारत और अमेरिका के बीच व्यापार युद्ध की आशंका जताई जा रही है। इसके चलते शेयर बाजार का संवेदी सूचकांक पिछले तीन दिनों से लगातार नीचे का रुख किए हुए है। विदेशी निवेशक जबर्दस्त निकासी कर रहे हैं। दरअसल, दोनों देशों के बीच व्यापार युद्ध की आशंका अमेरिका के विकासशील देशों को दिए तरजीही राष्ट्र के दर्जे को वापस लेने के बाद से ही जताई जाने लगी। उन देशों में भारत भी शामिल है। उसके तरजीही राष्ट्र का दर्जा यानी जीएसपी हटाने से भारत से निर्यात की जाने वाली करमुक्त वस्तुओं पर भारी कर का भुगतान करना पड़ेगा। इससे भारतीय उत्पादकों पर बोझ बढ़ेगा। अमेरिकी फैसले के बाद भारत सरकार ने भी अमेरिका से भारत आने वाली अखरोट, बादाम, दाल जैसी अट्ठाईस वस्तुओं पर सीमा शुल्क बढ़ा दिया। भारत के इस फैसले को प्रतिक्रिया में उठाया कदम बताया जा रहा है। अमेरिका के फैसले से भारतीय एल्यूमिनियम, इस्पात आदि उत्पादों पर शुल्क बढ़ गया है, जिसके चलते इन क्षेत्रों में काम करने वाली कंपनियों के सामने मुश्किलें खड़ी हो गई हैं। इन्हीं क्षेत्रों में काम करने वाली कंपनियों के शेयरों में गिरावट देखी गई है।

अर्थव्यवस्था को संभालने के लिए राष्ट्र कई बार सीमा शुल्क में दी जा रही छूटों को समाप्त करने का फैसला करते हैं। इसलिए अमेरिका का फैसला नया नहीं है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था नाजुक दौर से गुजर रही है। डोनाल्ड ट्रंप ने अपने चुनाव प्रचार में अमेरिकी युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने और अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का वादा किया था। रोजगार के नए अवसर पैदा करने के लिए और सुरक्षा कारणों से उन्होंने अपने कार्यकाल के शुरुआती दिनों में ही अनेक देशों के नागरिकों के नौकरी के लिए अमेरिका पहुंचने संबंधी नियमों को कड़ा कर दिया था। अब उन्होंने अर्थव्यवस्था को संभालने के लिए तरजीही राष्ट्र की सूची में शामिल देशों से आने वाली वस्तुओं पर से कर की छूट समाप्त कर दी। इससे अमेरिका का राजस्व बढ़ेगा और वहां की वस्तुओं के लिए बाजार बढ़ेगा। मगर बड़े देश जब कुछ देशों को तरजीही राष्ट्र का दर्जा देते हैं, तो उसके पीछे मकसद उन देशों को अपनी अर्थव्यवस्था सुधारने में मदद करना और व्यापारिक संबंधों को मजबूत बनाना होता है। इस तरह अमेरिका ने भारत को जीएसपी से बाहर किया, तो यही माना गया कि वह भारत से अपने संबंधों को पहले जैसा मधुर नहीं बनाए रखना चाहता। इसलिए भारत का फैसला अस्वाभाविक नहीं माना जा सकता कि उसने भी अमेरिका से आयात होने वाली कुछ वस्तुओं पर दी जा रही छूट को समाप्त कर दिया।

दरअसल, भारत तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था जरूर है, पर हकीकत यही है कि यह मजबूत स्थिति में नहीं है। विकास दर का रुख नीचे की तरफ है। ऐसे में सरकार के माथे पर चिंता की लकीरें देखी जा रही हैं। इससे पार पाने के लिए सरकार ने दो समितियां गठित की हैं जो विकास दर में तेजी लाने और रोजगार के नए अवसर पैदा करने संबंधी उपायों पर विचार करेंगी। नीति आयोग की संचालन परिषद की बैठक में भी प्रधानमंत्री ने सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों को इस मामले में कंधे से कंधा मिला कर काम करने और निर्यात बढ़ाने की दिशा में प्रयास करने पर जोर दिया। अगले पांच सालों में सरकार ने अर्थव्यवस्था को पांच हजार अरब डॉलर तक ले जाने का इरादा जताया है। इसलिए अमेरिकी वस्तुओं पर कर संबंधी छूट वापस लेने का फैसला अनुचित नहीं कहा जा सकता। शेयर बाजार की आशंका बहुत गंभीर नहीं मानी जानी चाहिए।

कल्पमेधा

इस संसार में देखने के लिए बहुत से
खूबसूरत स्थान हैं पर सबसे खूबसूरत है बंद
आंखों से अपने भीतर देखना।
–गौतम बुद्ध

गरमाती धरती के खतरे

निरंकार सिंह

वैश्विक स्तर पर धरती का तापमान बढ़ने से समुद्र तटीय क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों पर इसका व्यापक असर होगा। ग्रीनलैंड और अंटार्कटिक पर जमी बर्फ लगातार कम होती जा रही है। इससे समुद्र का जलस्तर दो मीटर तक बढ़ सकता है। इससे तटीय शहरों के डूबने का खतरा बढ़ जाएगा। कोलकाता, मुंबई और चेन्नई जैसे महानगरों का डूब जाना तो साधारण बात होगी।

धरती का तापमान जिस रफ्तार से बढ़ता जा रहा है, वह इस सदी के अंत तक प्रलय के नजारे दिखा सकता है। इससे धरती का मौसमी चक्र बदल रहा है। दुनिया के कई देशों में चक्रवाती तूफान, बाढ़, सूखा और अतिवृष्टि जैसी कुदरती आपदाओं की तीव्रता और संख्या में भी वृद्धि हो रही है। कहीं ठंडक अधिक हो रही है तो कहीं गर्मी से लोग बेहाल हैं। भारत जैसे उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले देश के मौसमी चक्र में भारी बदलाव हो रहा है। दुनिया के सबसे गर्म पंद्रह शहरों में दस शहर भारत के हैं। पचास के दशक में उच्च तापमान का क्षेत्र केवल दक्षिण-मध्य भारत तक सीमित था, जहां इकतालीस डिग्री सेल्सियस तक तापमान दर्ज किया जाता था। लेकिन अभी तो तकरीबन पूरा भारत ही गर्मी का गढ़ बन गया है। राजस्थान के श्रीगंगानगर और चूरू जैसे इलाकों में तापमान पचास डिग्री तक जा पहुंचा। मौसम विभाग के मुताबिक 1961 से 2018 के बीच तापमान में आश्चर्यजनक बढ़ोत्तरी (करीब 0.8 डिग्री सेल्सियस) दर्ज की गई है और गर्मी वाले दिनों की संख्या पूरे देश में बढ़ गई है।

मौसम विभाग का मानना है कि अगर इस बार बारिश पूर्वानुमान के अनुसार नहीं होती है तो 2019 बीते साल से भी ज्यादा गर्म होगा। भारी गर्मी अपने साथ जल संकट भी लाती है। पिछले कुछ वर्षों से बार-बार सूखे का सामना कर रहे महाराष्ट्र के विदर्भ और उत्तर प्रदेश-मध्यप्रदेश के बुंदेलखंड में पीने के पानी की समस्या बढ़ गई है। इन इलाकों में कई जलाशयों में पानी का स्तर क्षमता का दस फीसद ही रह गया है, जिससे कुछ फसलें संकटग्रस्त हो गई हैं। केंद्रीय जल आयोग के अनुसार पानी का स्तर अभी बीते दस सालों में सबसे कम है। यह तो तात्कालिक संकट है। पर असली समस्या अत्यंत गंभीर है। जलवायु बदलने से फसलों की पैदावार से लेकर उनकी गुणवत्ता पर भी प्रभाव पड़ने वाला है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए यह संकट एक चुनौती के रूप में उभर रहा है। यदि अभी से हमने अपने पर्यावरण के संतुलन पर ध्यान नहीं दिया तो हमारा भविष्य संकटों से भरा होगा।

जलवायु संकट (ग्लोबल वार्मिंग) के कारण बीती आधी सदी में दुनिया भर में अतिवृष्टि के मामलों में काफी बढ़ोतरी हुई है। वर्ष 1964 से लेकर 2013 तक अत्यधिक बारिश की सर्वाधिक घटनाएं हुईं। अत्यधिक वर्षा की घटनाएं कनाडा के कुछ हिस्सों, यूरोप, अमेरिका के मध्य-पश्चिम और पूर्वोत्तर क्षेत्र, उत्तरी ऑस्ट्रेलिया, पश्चिमी रूस और चीन के कुछ हिस्सों में बढ़ी हैं। कनाडा की सास्काचेवान यूनिवर्सिटी में हाइड्रो-क्लाइमेटोलॉजिस्ट साइमन के अनुसार इस अध्ययन के लिए वैश्विक स्तर पर बारिश के तमाम रेकार्ड खंगाले गए, जिनमें पाया गया कि बीते पचास साल के दौरान जब ग्लोबल वार्मिंग में तेजी आनी शुरू हुई तो अतिवृष्टि के मामलों में भी आश्चर्यजनक रूप से बढ़ोतरी देखी गई। यह बदलती प्रवृत्ति जलवायु परिवर्तन के खतरों के प्रति आगाह करती है। इसी दौरान यूरोप और एशिया के भागों में 8.6 फीसद ज्यादा अतिवृष्टि हुई। जलवायु संकट के कारण भारी बारिश के मामले बढ़ रहे हैं। साथ ही, यह कई बीमारियों को भी अपने साथ लेकर आती है। वर्ष 1980 से 2009 के बीच अतिवृष्टि के कारण आई बाढ़ में लगभग पांच लाख लोगों की मौत हो गई।

वैश्विक स्तर पर धरती का तापमान बढ़ने से समुद्र तटीय क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों पर इसका व्यापक असर होगा। ग्रीनलैंड और अंटार्कटिक पर जमी बर्फ लगातार कम होती जा रही है। इससे समुद्र का जलस्तर दो मीटर तक बढ़ सकता है। इससे तटीय शहरों के डूबने का खतरा बढ़ जाएगा। कोलकाता, मुंबई और चेन्नई जैसे महानगरों का डूब जाना तो साधारण बात होगी। ब्रिटेन की यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिस्टल के शोधकर्ताओं ने बताया कि ग्रीनलैंड और अंटार्कटिका में बर्फ की चादरों के पिघलने के बाद समुद्र का स्तर बढ़ने से तटीय क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा, जो पारिस्थितिकी तंत्र के लिए भी सबसे बड़ा खतरा है। समुद्री जलस्तर बढ़ने के संभावित खतरों से निपटने के लिए अभी से वैज्ञानिक रणनीति बनाने की जरूरत है।

समुद्र के स्तर में वृद्धि के अनुमान ग्रीनलैंड और अंटार्कटिक बर्फ की चादरों के विकास के बारे में चल रही अनिश्चितता के कारण चुनौतीपूर्ण बने हुए हैं। शोधकर्ताओं ने बताया कि तकनीक का प्रयोग कर उन्होंने बर्फ की बाईस चादरों की जांच कर यह अनुमान लगाया है कि ग्रीनलैंड, वेस्ट अंटार्कटिक और पूर्वी अंटार्कटिक में बर्फ पिघलने से वैश्विक

स्तर पर तापमान में क्या फर्क पड़ा। इस अध्ययन से पता चलता है कि वर्ष 2100 तक उच्च ताप वाले इलाकों में समुद्र का जल स्तर दो मीटर तक बढ़ सकता है। यदि ऐसा हुआ तो लगभग दस लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र जलमग्न हो सकता है और दस लाख लोग इससे प्रभावित हो सकते हैं।

इस संकट से निपटने के लिए कैंब्रिज यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने एक शोध केंद्र की योजना बनाई है। यह केंद्र पृथ्वी को बचाने के नए रास्ते तलाशेगा। इस शोध में ऐसे तरीकों की खोज की जाएगी, जिनसे ध्रुवों की पिघल रही बर्फ को फिर से जमाया जा सके और वातावरण से कार्बन डाइ ऑक्साइड निकाली जा सके। इस केंद्र को इसलिए बनाया जा रहा है कि वर्तमान में पृथ्वी पर जलवायु संकट के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए उठाए जा रहे कदम नाकाफी लग रहे हैं। यह पहल ब्रितानी सरकार के पूर्व मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर सर डेविड किंग की ओर से कराई जा रही है। डेविड किंग के अनुसार आने वाले दस सालों में हम जो भी करेंगे वह मानव जाति के अगले दस हजार सालों का भविष्य तय करेगा। यह मुहिम सामाजिक वैज्ञानिकों, वैज्ञानिकों और इंजीनियरों को एक साथ लाएगी। यह वास्तव में हमारे समय की सबसे महत्त्वपूर्ण चुनौतियों में से है। यह ध्रुवों पर बर्फ को जमाने की कोशिशों में सबसे कारगर कदमों में से एक होगा। इनके ऊपर पड़ने वाले बदलों को चमकदार करना है। इसके लिए बेहद पतली नलियों को मानव रहित जहाजों पर लगा कर समुद्री पानी को पंप से ऊपर खींचा जाएगा। इससे नमक के कण नली में आएंगे। इस नमक को बादलों तक पहुंचाया जाएगा। इससे बादल गर्मी को और भी ज्यादा परावर्तित कर सकेंगे।

जलवायु परिवर्तन से निपटने का एक और अहम तरीका है- कार्बन कैप्चर और स्टोरेज जिसे सीसीएस कहते हैं। सीसीएस में कोयले या गैस से निकाली कार्बन डाई आक्साइड को बिजली स्टेशनों या इस्पात संयंत्रों से इकट्ठा कर इसे भूमिगत भंडारों में सुरक्षित किया जाता है। यूनिवर्सिटी ऑफ शेफील्ड के प्रोफेसर पीपर स्ट्राइंग के अनुसार दक्षिण वेल्स के पोर्ट टैलबोट में टाटा स्टील के साथ एक कार्बन कैप्चर एंड यूटिलाइजेशन (सीसीयू) पायलट योजना विकसित की जा रही है, जो प्रभावी रूप से कार्बन डाइआक्साइड को पुनर्चक्रित करता है। प्रोफेसर स्ट्राइंग के अनुसार, इस योजना में एक संयंत्र की स्थापना की जाएगी जो फर्म के कार्बन उत्सर्जन को ईंधन में परिवर्तित करेगा। हमारे पास हाइड्रोजन का एक स्रोत है। हमारे पास कार्बन डाइआक्साइड का एक स्रोत है, हमारे पास गर्मी का एक स्रोत है। हम इसके जरिए अक्षय ऊर्जा पैदा करेंगे। हम सिंथेटिक ईंधन बनाने जा रहे हैं। इनमें से एक उपाय समंदरों को हरा-भरा करना भी है, ताकि वे अधिक कार्बन डाइआक्साइड को सोख सकें। इस समस्या के समाधान के लिए हमें अपनी धरती को हरा-भरा बनाना होगा, ताकि पेड़-पौधे अधिक कार्बन डाइआक्साइड सोख सकें और धरती का तापमान बढ़ने से रोक सकें। वृक्षारोपण को जन अभियान का हिस्सा बनाना होगा। वृक्षों को लगा कर और धरती पर हरियाली बढ़ा कर ही अपनी भावी पीढ़ी का भविष्य बचा सकते हैं।

अंधेरी राहें

अतुल चतुर्वेदी

दुनिया मेरे आगे

गरमी की छुट्टियां होते ही बच्चे शिकायत करने लगते हैं कि कहीं बाहर घूमने चलें। यह दर्द मित्रों और परिजनों के सोशल मीडिया पर निरंतर आती सूचनाओं, मनोहारी चित्रों और वर्णनों को देख कर और बढ़ जाता है। ऐसे में अगर आपके मोहल्ले और पड़ोस का कोई परिवार पहाड़ों पर जा रहा हो तो इस दुख के सागर की कल्पना ही की जा सकती है। दरअसल, पहले गरमी की छुट्टियां होते ही नानी के घर जाने का रिवाज-सा था। लेकिन पिछले कुछ दशकों में स्थितियां बदली हैं। अव्वल तो नानी के घर देश या परदेश में रहने के कारण इतने दूर हो गए हैं कि वहां जाना इतना आसान नहीं है। दूसरे, नानी के घरों में अब वे बातें और रोमांच नहीं रहा, जैसा पहले था।

खगोलीकरण ने सब घरों को लगभग एक जैसा बना दिया है। न नानी के घर में वैसे आम के बाग हैं, जहां अलसुबह उठ कर बच्चों के झुंड के साथ निकल जाया जाए और दिन भर आम तोड़ा जाए। वहां के कुएं पर नहाएं और फिर दोपहर चढ़ते तक लौटें। न वहां पर घर के बरामदे या आंगन में पड़े हुए झूले हैं और न छतों पर पानी छिड़क कर बिछावन पर रात में सोने का सुख। सच कहें तो आज की नानी खुद एक हद तक टीवी धारावाहिक और सोशल मीडिया के मोहपाश में जकड़ी हैं। उनके पास अपने बच्चों को सुनाने के लिए अनुभव और परियों की कहानियां भी नहीं हैं।

ज्यादा शिकायत करने पर बच्चों को मोबाइल, कंप्यूटर और टीवी के आगे कार्टून चैनल लगा कर बैठा दिया जाता है। लेकिन ऐसी सुविधाएं उनके अपने घर में भी मौजूद हैं। लिहाजा नानी के घर जाने का आकर्षण क्षीण हो रहा है। उसमें छिपा हुआ अनूठा अनुभव समाप्त हो रहा है। नानी के यहां जाने पर न तो बड़ के पत्ते पर मटके में कुल्फी बेचने वाला आता है, न दोपहर में चुस्की और फालसे बेचने वाला। सब जगह वही आइसक्रीम और बेकरी की दुकानें।

ग्रीष्मावकाश में कुछ स्कूल और स्वयंसेवी संस्थाएं बच्चों और किशोरों के लिए 'हॉबी क्लासेज' यानी पसंद की कक्षाएं भी लगाती हैं। हालांकि इनका उद्देश्य अपनी संस्था का प्रचार-प्रसार करना अधिक और बच्चों में कलात्मक या खेलकूद संबंधी अभिरुचियों का विकास करना कम होता है। आमतौर पर एक सप्ताह से दस दिन की इन कक्षाओं में न तो इतने उच्च स्तरीय प्रशिक्षक बुलाए जाते हैं और न ही विधा के बारे में व्यापक और गंभीर जानकारी दी जाती है। घूम-फिर कर बच्चों के सामने समस्या मुंह बाए खड़ी रहती है कि कहां जाएं और क्या करें!

कुछ स्कूल इतने सख्त होते हैं और परस्पर प्रतिस्पर्धा के चलते वे छुट्टियों के दिन के लिए भी इतना होमवर्क बच्चों को सौंप देते हैं कि अभिभावकों तक के माथे पर पसीना आ जाता है। इस चिंता और भाग-दौड़ में छुट्टियां कहां व्यतीत हो जाती हैं, पता भी नहीं चलता। जितना बड़ा शैक्षणिक संस्थान, उतना ज्यादा बच्चों पर काम का बोझ। असल में बच्चे हमारी प्राथमिकता सूची में कभी आए ही नहीं हैं, न आज कोई राजनेता नेहरूजी की तरह बच्चों से अनुराग रखने वाला बचा है।

बच्चों के व्यक्तित्व के ठोस विकास के लिए न कभी महिला एवं बाल विकास विभाग ने पुख्ता योजनाएं बनाईं, न उन्हें इतनी फुर्सत है। बच्चों के मनोविज्ञान को समझने और उनकी अभिरुचियों को तराशने के लिए हमारे स्कूलों और स्वयंसेवी संस्थाओं के पास कोई स्पष्ट दृष्टि नहीं है। वे आज के सामाजिक, व्यावसायिक और राजनीतिक ढांचे के वैचारिक प्रदूषण को ग्रहण करते हुए बड़े हो रहे हैं। पढ़ने की आदत तो अब बड़ों में भी नहीं बची है तो बच्चों से अपेक्षा करना व्यर्थ है। मुझे याद है, पहले शहरों में बाल पुस्तकालय होते थे। गरमी के मौसम में बाल पत्रिकाओं 'पराग', 'नंदन' और 'लोटपोट' आदि के विशेषांकों की भारी मांग बच्चों के बीच रहती थी। पढ़ने से एक संस्कार और संवेदनाओं का विस्तार होता था।

आज सब कुछ 'गूगल बाबा' के हवाले है। इस आपाधापी में हम अपने अंतर्मन को खोजना शायद भूल गए हैं। हम भूल गए हैं कि हर बच्चे के अंदर भविष्य का एक कलाकार, लेखक या खिलाड़ी छिपा है, लेकिन हम उसकी अभिरुचियों को न तो पहचान रहे हैं और न विकास के लिए कोई मंच तैयार कर रहे हैं। वे ऊंचे नंबर तो ला रहे हैं, मगर एक जिम्मेदार और संवेदनशील नागरिक या बेटा या बेटी नहीं बन पा रहे। नानी और नाना के जरिए आती हुई अनौपचारिक शिक्षा का सूत्र भी अब बिखरा-बिखरा-सा लगता है। उस पगडंडी पर चलने की जहमत और धैर्य कितनों के पास बचा है और उस शानदार परंपरा को निभाने वाले व्यक्तित्व भी अब कहां हैं! अपने इतिहास के बारे में अज्ञान हमारी दुर्गति के लिए जिम्मेदार है, जिसके कारण हमारा समाज एक स्वार्थी, क्रूर और हिंसक समाज में तब्दील होता जा रहा है।

वायरस का कहर

अस्पताल वही है, बिस्तर भी वही हैं और डॉक्टर भी वही हैं। केवल मरीज बदल रहे हैं और मौतों का सिलसिला जारी है। बिहार में एक तरफ जहां 'एक्यूट इंसेफलाइटिस सिंड्रोम' (एईएस) नामक बीमारी का कहर नौनिहालों की हंसती-खेलती जिंदगी को बेजुबान मौत में तब्दील कर रहा है वहीं दूसरी ओर भयंकर गर्मी और लू लोगों पर सितम ढा रही हैं। सरकार प्रकृति और बीमारी के कारण मौत के इस तांडव के आगे लाचार नजर आ रही है।

एईएस वायरस का कहर उत्तर बिहार को पूर्ण रूप से अपनी जद में ले चुका है। मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, सीतामढ़ी, मोतिहारी समेत उत्तर बिहार के अन्य जिलों में एईएस वायरस की वजह से उत्पन्न मियादी बुखार के कारण हर रोज दर्जनों मांओं की गोद सूनी हो रही हैं। मुजफ्फरपुर का हाल सभी जिलों से भयावह है। उत्तर बिहार में मांओं के रुदन से आसमान का भी कलेजा फट रहा है। प्राप्त जानकारी के अनुसार वहां एईएस वायरस के कारण अभी तक सौ से ज्यादा बच्चे काल कवलित हो चुके हैं।

दूसरी तरफ प्रचंड गर्मी और लू के प्रकोप से दक्षिण बिहार कराह रहा है। नवादा, गया, नालंदा, जहानाबाद समेत दक्षिण बिहार के अन्य जिलों में भयंकर गर्मी और लू से 107 लोग जिंदगी की जंग हार चुके हैं! मौतों का यह सिलसिला न जाने किस मोड़ पर जाकर समाप्त होगा! बिहार देश का ऐसा पिछड़ा राज्य है जहां गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा और बेरोजगारी दर अन्य राज्यों की तुलना में ज्यादा है। यहां स्तरीय अस्पतालों और अच्छे डॉक्टरों का अभाव है। इस मुश्किल घड़ी में उसे मदद की सख्त जरूरत है। इस गंभीर संकट के दौर में सभी राजनीतिक दलों को अपने मतभेद भुला कर एक मंच पर आकर इस त्रासदी से जनता को मुक्त कराना होगा। अभिभावकों को भी ज्यादा सतर्क रहने की जरूरत है। वे अपने बच्चों का खयाल रखें क्योंकि सतर्कता ही इस महामारी के प्रकोप को कम कर सकती है। लू और भयंकर गर्मी के मौसम में घर से तभी निकलें जब कोई अति आवश्यक काम हो। वैसे आपके किसी काम का मोल आपकी जिदंगी से बढ़कर नहीं है।

● *कुंदन कुमार, समस्तीपुर, बिहार*

मौद्रिक कवायद

क्या रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया यानी आरबीआई द्वारा बार-बार रेपो रेट कम करने से निजी पूंजी निवेश में वृद्धि होगी? पिछले छह महीनों में तीन बार 0.25 फीसद करके ब्याज दर में कटौती की गई। क्या इससे कर्ज लेने वालों को फायदा हुआ? एक अध्ययन के अनुसार बैंकों ने केवल 0.21 फीसद का लाभ ग्राहकों को दिया। इसका कारण भी है। सार्वजनिक क्षेत्र के ज्यादातर बैंकों को अपने फंसे हुए कर्ज यानी एनपीए के कारण जबरदस्त नुकसान हुआ है। आरबीआई की इस कटौती को बैंक अपने घाटे की भरपाई के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। इसलिए केंद्रीय बैंक जिस वजह से यह कटौती कर रहा है उसका लाभ अर्थव्यवस्था को नहीं मिल पा रहा है। नतीजतन, अर्थव्यवस्था आहिस्ता-आहिस्ता मंदी की तरफ बढ़ रही है।

पिछले मार्च में तिमाही जीडीपी से यह स्पष्ट हो गया है। केंद्रीय बैंक ने भी वित्तीय वर्ष 2020 के लिए जीडीपी के अनुमान को 7.2 से घटाकर सात फीसद कर दिया है। बाजार में ऊहापोह की स्थिति है। निजी पूंजी निवेश गिरता जा रहा है। नए ऋणों की मांग ही नहीं हो रही है। उद्योग क्षेत्र में पूर्ण क्षमता के केवल 75 फीसद का उपयोग हो रहा है क्योंकि बाजार में मांग ही नहीं है। इस स्थिति के लिए केवल वैश्विक कारणों को जिम्मेदार बता कर सरकार पल्ला नहीं झाड़ सकती। अपने दूसरे कार्यकाल में उसे अब गंभीरता से काम करना होगा।

● *जंग बहादुर सिंह, गोल पहाड़ी, जमशेदपुर*

चौपाल

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

बड़ा खतरा

पूरे विश्व में सत्रह जून को विश्व मरुस्थल रोकथाम दिवस मनाया गया। इस वर्ष का मुख्य विषय था 'चलो भविष्य में एक साथ आगे बढ़ें'। इस दिवस को मनाने का उद्देश्य दुनिया में मरुस्थलीकरण को रोकना है। गौरतलब है कि भारत का लगभग 30 फीसद हिस्सा मरुस्थल में तब्दील हो चुका है। इसका एक बड़ा हिस्सा जल संकट से जूझ रहा है और मौसम में आकस्मिक बदलाव हो रहे हैं। यों तो इस सबके लिए कई कारण जिम्मेदार हैं लेकिन जल की कमी, वृक्षों की कटाई आदि अहम हैं जिनके लिए सिर्फ और सिर्फ मानव जिम्मेदार है। मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन किया जा रहा है जो भविष्य के लिए एक बड़ा खतरा है। वक्त रहते हम पर्यावरण के प्रति जागरूक नहीं हुए तो अपना अस्तित्व बचाने में असमर्थ सिद्ध होंगे।

● *सोनू राज, मुखर्जी नगर, दिल्ली*

घटता भूजल

जिस प्रकार साल दर साल वर्षा में कमी आ रही है, उसी प्रकार भूजल स्तर में भी कमी आ रही है। भारत के अनेक राज्य पानी की कमी के चलते त्रस्त हैं। इनमें सबसे अधिक महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, ओड़ीशा और बिहार में पीने योग्य पानी के लिए लोग तरस रहे हैं। यहां कुएं सूख चुके हैं, नदियां, तालाब और पानी के अन्य सोते जमींदोज हो चुके हैं। अत्यधिक जलदोहन और समुचित जल संरक्षण के अभाव में जलाभाव की विकरालता आने वाले समय के लिए गंभीर खतरे की घंटी बजा चुकी है। बड़े शहरों और महानगरों में जिस प्रकार भूजल का दोहन हो रहा है और उसे बर्बाद किया जा रहा है, उससे तो इन शहरों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। कुछ अधिक संपन्न लोग अधिक जल बर्बाद करते देखे जा रहे हैं। जमीन के 500 फीट नीचे से भी सबमर्सिबल पंपों द्वारा पानी निकाल कर घरों के फर्शों और गाड़ियों को धोया जा रहा है और बेतहाशा पानी बहाया जा रहा है।

अपवादों को छोड़ दें तो संपन्नता संवेदनशीलता और मार्मिकता में आंशिक कमी ला ही देती है। इनको कोई रोकने वाला नहीं। इन्हें किसी लाइसेंस की आवश्यकता नहीं! इनमें से अनेक वे लोग भी हैं जो भारत के विभिन्न अभियानों के 'ब्रांड एंबेसडर' बने हुए हैं। कुछ अधिक दबाव पड़ने पर कार्रवाई के नाम पर इन्हें सौ-पांच सौ का चालान थमा कर इतिश्री समझी जा रही है, लेकिन प्यासे लोग तो हाहाकार कर रहे हैं; मवेशी प्यास से तड़प-तड़प कर मर रहे हैं, मगर इन्हें उससे क्या! इनके फर्श व गाड़ियां तो चमचमाती रहनी ही चाहिए!

● *सतप्रकाश सनोठिया, रोहिणी, नई दिल्ली*